डिब्बाबन्दी का मौसम

लेखनः मार्गरेट कार्लसन, चित्रः किमएन स्मिथ

भाषान्तरः पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा

डिब्बाबन्दी का मौसम

लेखनः मार्गरेट कार्लसन

चित्रः किमएन स्मिथ

भाषान्तरः पूर्वा याज्ञिक कुशवाहा

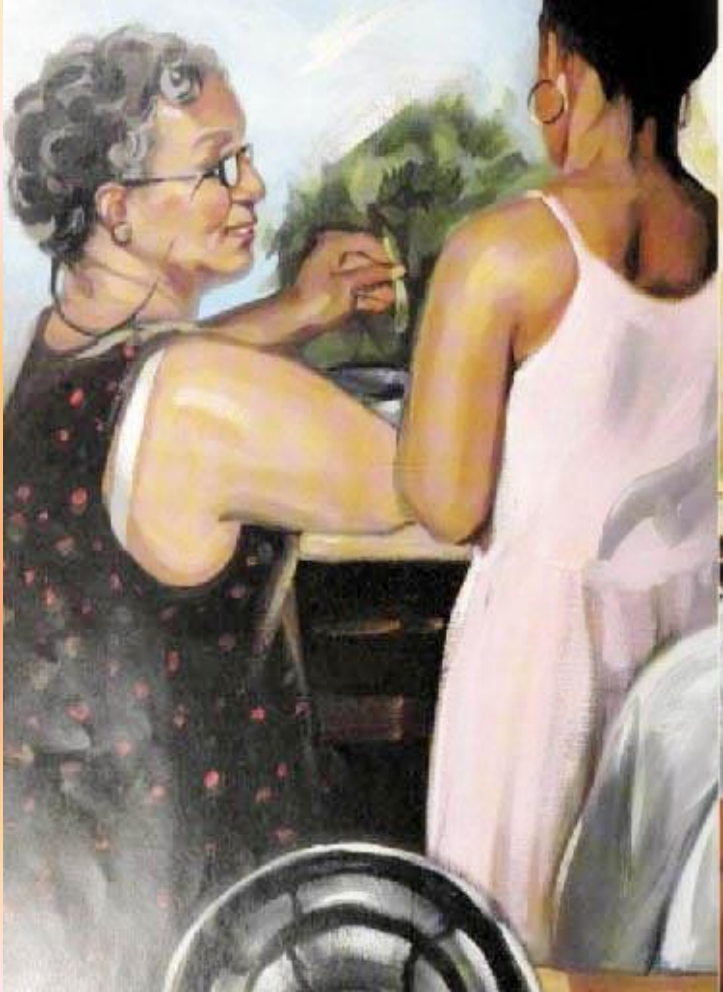

पृष्ठभूमि में बज रहे गॉस्पल संगीत (कालों के आध्यात्मिक गीत) पर तीन मोटे कूल्हे धीमे-धीमे थिरक रहे थे। संगीत इतनी ज़ोर से बज रहा था कि उन पाँच पंखों के शोर के ऊपर भी सुना जा सके, जो रसोई की गर्म चिपचिपी हवा को बाहर निकालने के लिए, जगह-जगह सावधानी से रखे गए थे। अगस्त के आख़िरी दिन थे। साल था 1959। फल-सब्ज़ियों को डिब्बाबन्द करने का मौसम पूरे ज़ोर पर था।

पर लग यह रहा था कि नानी, माँ और मौसी को गर्मी महसूस ही नहीं हो रही हो। सेम फलियों के सिरों को तोड़, उन्हें आधा कर, काले-सफेद धब्बों वाले बर्तन में डालने से, जो खट-पट और टन्न्न की आवाज़ें हो रही थीं वे मानो संगीत की लय से ताल मिला रही थीं।

ये अवाज़ें सुखद थीं। पंखे गुनगुना रहे थे और संगीत बज रहा था और फलियाँ तामचीनी से बने बर्तन की सतह से टकरा टन्न की आवाज़ कर रहीं थीं।

पर मुझे सबसे ज़्यादा अच्छी लग रही थीं सिंक के पास खड़ी नानी, मौसी और माँ के हंसने की आवाजें.... मैं अपनी गरदन मोड़ रसोई में झांक रही थी ताकि कोई देख न ले। मैं चुपचाप कान गडाए हुए थी, इस उम्मीद में कि उनकी साझी हंसी का राज़ पा सकूँ। मुझे उस दिन का बेसब्री से इन्तज़ार था जब वे मुझे भी अपने पास खडा कर राज़ बताएंगी।

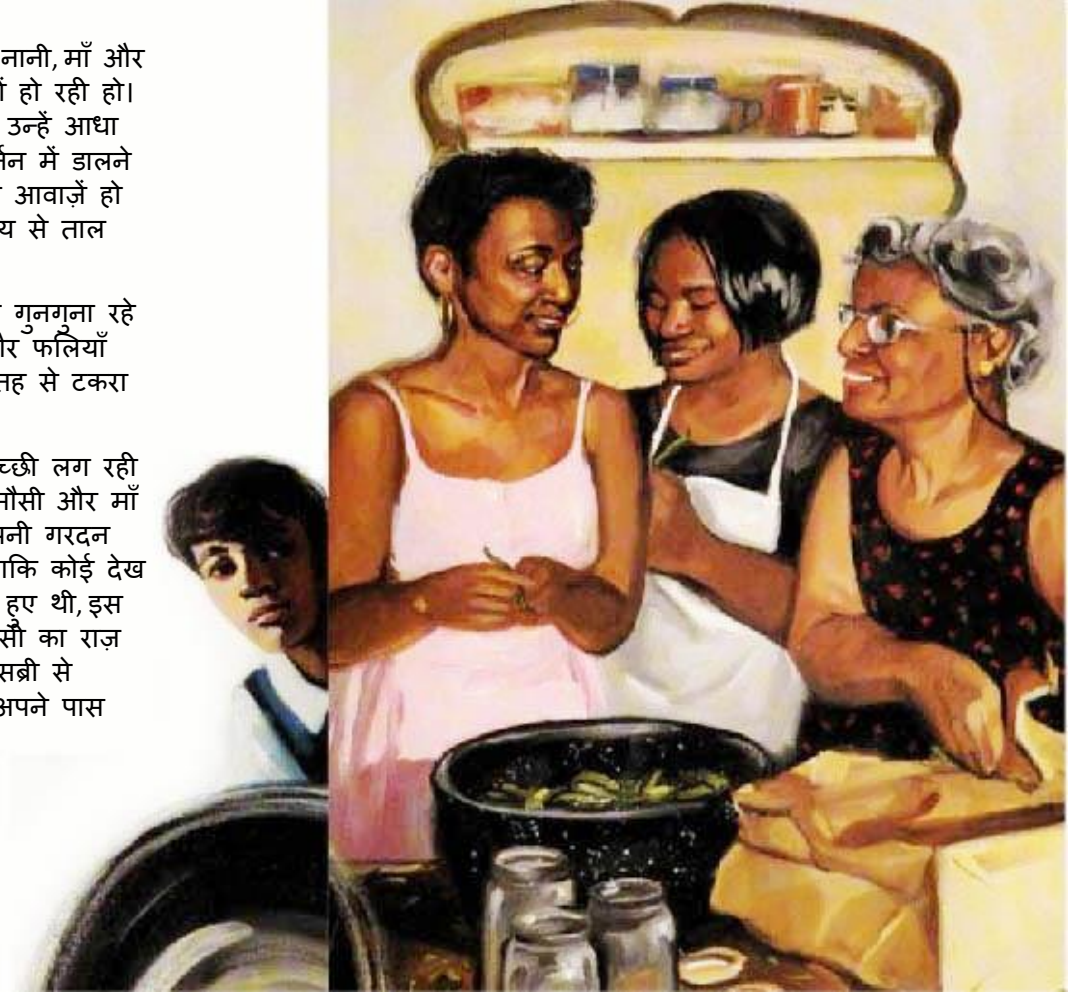

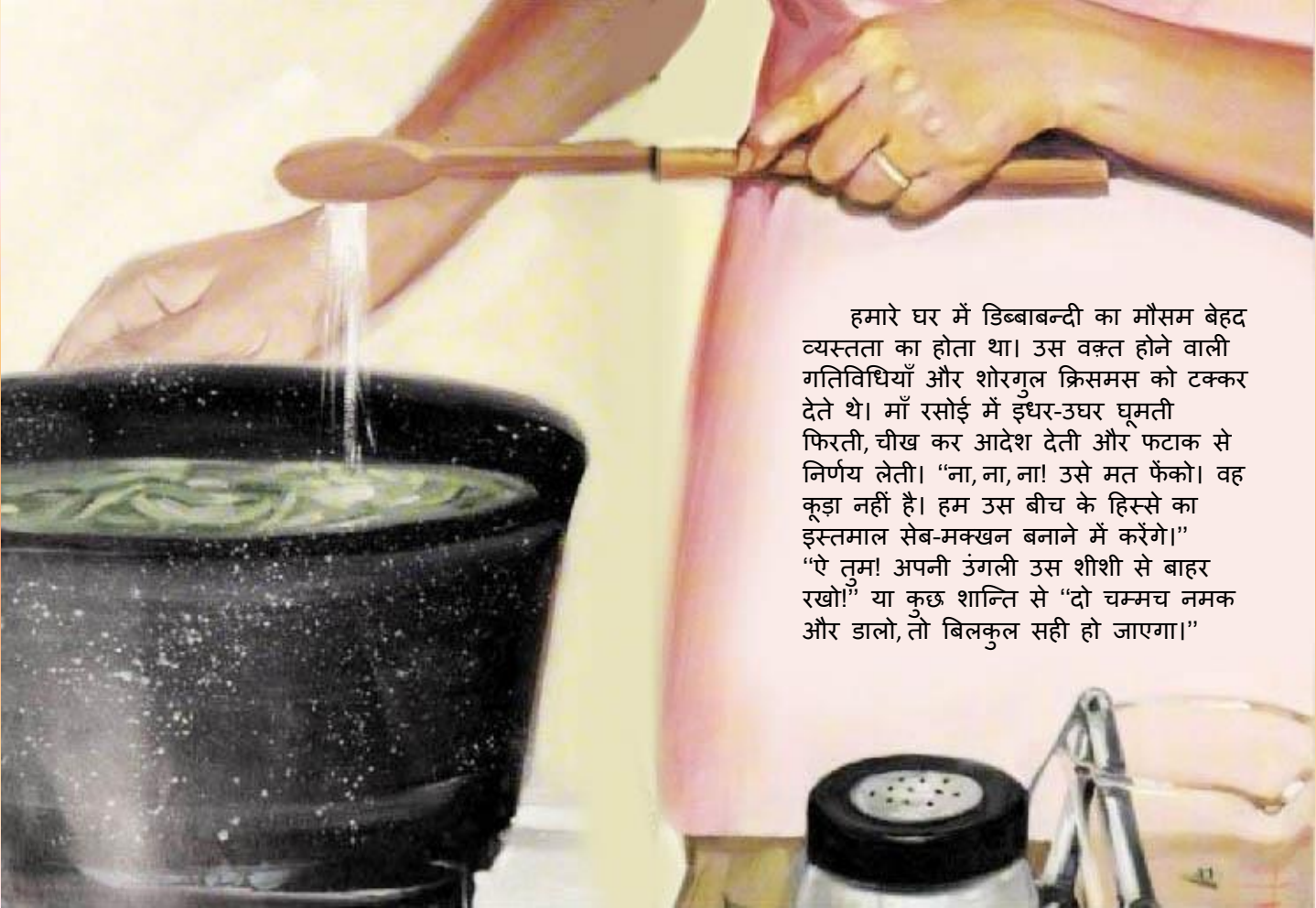

हमारे घर में डिब्बाबन्दी का मौसम बेहद व्यस्तता का होता था। उस वक़्त होने वाली गतिविधियाँ और शोरगुल क्रिसमस को टक्कर देते थे। माँ रसोई में इधर-उधर घूमती फिरती, चीख कर आदेश देती और फटाक से निर्णय लेती। "ना, ना, ना! उसे मत फेंको। वह कूड़ा नहीं है। हम उस बीच के हिस्से का इस्तमाल सेब-मक्खन बनाने में करेंगे।" "ऐ तुम! अपनी उंगली उस शीशी से बाहर रखो!" या कुछ शान्ति से "दो चम्मच नमक और डालो, तो बिलकुल सही हो जाएगा।"

माँ का स्वभाव नुक्ताचीनी करने वाला था। छोटे बच्चे और जो लोग दूसरों का कहा झेल नहीं सकते थे उन्हें माँ से दूर ही रखा जाता था।

"माँ," मेरी माँ अपनी माँ से कह रही थी, "मुझे फलियों की यह शीशी बिलकुल ठीक नहीं लग रही है।"

नानी ने उस शीशी को देखा। "मुझे तो बिलकुल सही लग रही है, मेरी जेन। तुम्हें क्या कमी नज़र आ रही है?" नानी ने पूछा।

"इसमें जगह रह गई है, देखो इस जगह," माँ ने शीशी को रोशनी में उठा कर कहा। फलियों और शीशी के पेंदे के बीच एक बारीक सी रेखा छूट गई थी। "जब सेम फलियाँ रस सोखेंगी, यह जगह और बढ़ जाएगी। मुझे यह सख़्त नापसन्द है।" उन्होंने शीशी को नफ़रत से देखा।

नानी और मौसी ने एक-दूसरे को कनखियों से देखा। मेरी जेन को खुश करना आसान काम नहीं था। "इससे स्वाद में कोई फ़र्क नहीं पड़ेगा मेरी प्यारी।"

"हाँ पर इस शीशी को आले की पिछली कतार में रखना पड़ेगा। यह पहली कतार में रखने लायक लगती ही नहीं है।"

उस बदसूरत शीशी को अलग रख दिया गया। लगने लगा कि पार्थक्य फलियों को भी उतना ही प्रभावित करता है जितना इन्सानों को।

मुझे तो लगा कि मैं भी सेम फलियों की उस शीशी जैसी ही हूँ। मेरी सहेली पैगी और मैं स्कूल से घर लौट रहे थे। हमने तय किया कि हम डॉनस् पोल्का डॉट डेयरी पर रुकेंगे और अपने जेबखर्च को उड़ाएंगे। मैंने बज़ूका बबलगम ख़रीदा और अपने मुँह में ठूंस लिया। उसे चबाने में मुझे पूरा ज़ोर लगाना पड़ रहा था।

"मैं आज, शुक्रवार की रात तुम्हारे घर नहीं बिता सकती," पैगी बोली।

मैं बबलगम के कारण बोल तो नहीं सकी, सो मैंने सवालिया नज़र उस पर डाली। "मेरी माँ कहती है कि अब मैं पहले की तरह तुम्हारे घर रात को रुक नहीं सकती।"

"क्यों नहीं?" मैंने मुश्किल से पूछा। मेरा सवाल "कों नी?" सा सुनाई दिया।

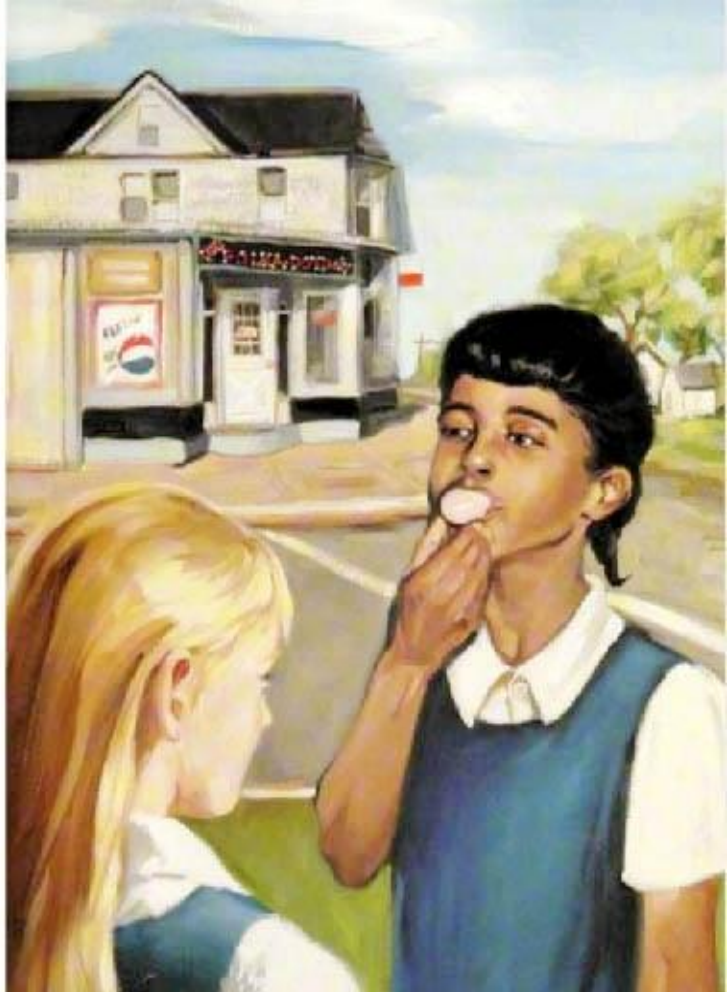

पैगी मेरी सबसे अच्छी और इकलौती सहेली थी। गोकि उसके लिए मैं खास महत्वपूर्ण नहीं थी। आख़िर वह लोकप्रिय थी, मैं नहीं। और वह एहतियात बरतती थी कि वह दूसरों के सामने मुझे "सबसे अच्छी सहेली" न कहे, जैसा वह अपनी दूसरी सहपाठिनों को कहती थी।

हम पास-पास रहते थे। हम दोनों का ही नामकरण मार्गरेट नाम से हुआ था, जो जल्दी ही पैगी में तब्दील हो गया। पर मैं अपने नाम के हिज्जे 'पैग्गी' लिखा करती थी। हम दोनों को बार्बी गुड़ियाओं से नफ़रत थी और पेड़ों पर चढ़ना पसन्द था। हम दोनों का साथ फबता था। मैं संतुष्ट थी।

"माँ कहती है कि मैं तुम्हारे घर नहीं रुक सकती, क्योंकि तुम्हारे भाई हैं," पैगी ने मुझे बताया।

मुझे उसकी बात का मतलब ही समझ नहीं आया। हम दोनों सालों से एक-दूसरे के घर रात बिताते आए थे। मिसेज़ नोलन को यह पता था कि मेरे भाई हैं। मेरे भाई और पैगी के भाई सभी टीमों में साथ खेला करते थे। मेरे पिता और उसके पिता इन टीमों को कोच किया करते थे। तो अब वह भला क्या कह रही थी!

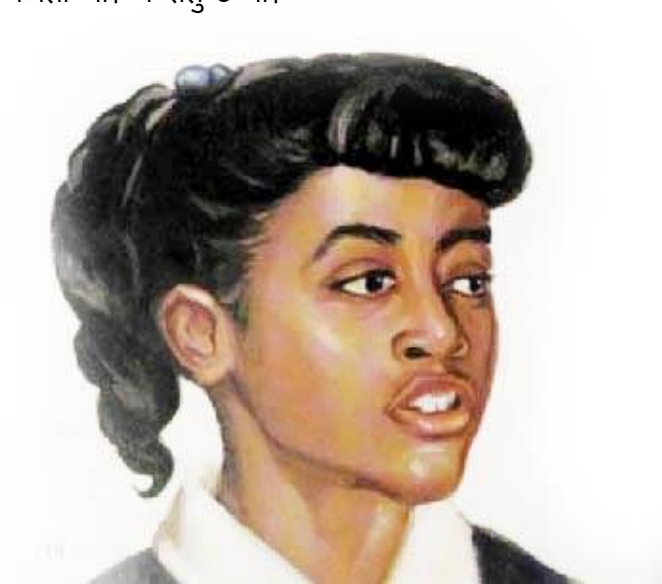

मैं उसे घूर रही थी और मेरे जबाड़े बबलगम को ज़ोर से चबा रहे थे। मिसेज़ नोलन पगला गईं हैं क्या?

"तुम तो जानती हो," पैगी ने अपने लम्बे बाल खींचते हुए कहा। वह अपने बाल केवल तब खींचती थी जब वह घबराई हुई हो। "तुम तो जानती हो...," उसने मुझे देखते हुए फिर से कहा। उसके चेहरे पर एक बेवकूफ़ी भरी मुस्कान थी।

मुझे गुस्सा आने लगा था। "मैं कुछ नहीं जानती। तुम कह क्या रही हो?"

"मुझ पर चिल्लाने की ज़रूरत नहीं है," वह बोली।

"पैगी," मैंने ऐसे कहा मानो मैं तीन साल के बच्चे से बात कर रही होऊं। "मेहरबानी से मुझे समझाओ कि तुम्हारी माँ को अचानक यह चेत कैसे हो आया कि मेरे कई भाई हैं?"

"उन्हें मालूम है कि तुम्हारे भाई हैं," पैगी ने जवाब दिया, "बात यह है...तुम्हें तो पता है...तुम लोग नीग्रो हो।"

मैंने अपना बबलगम इतनी ज़ोर से थूका कि वह उसके कान से लगते-लगते बचा। वह चौंककर परे उछली, पर कुछ बोली नहीं। "अच्छा," मैंने ऊँची आवाज़ में कहा।

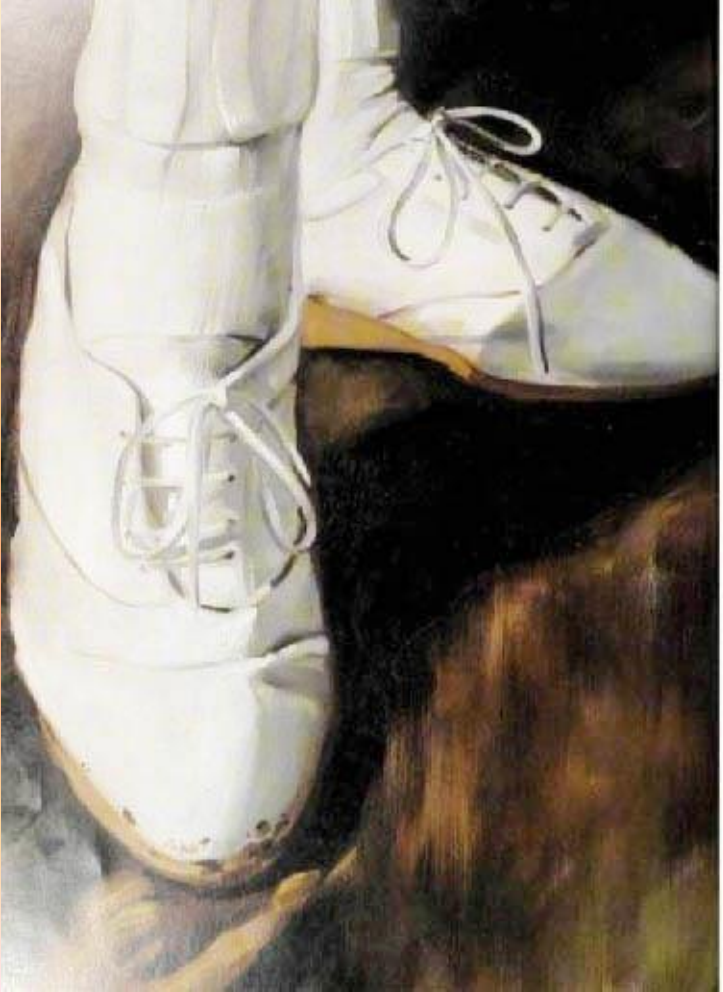

क्या मेरे भाई पैगी के प्रति आकर्षित हो सकते हैं? मिसेज़ नोलन को यही तो डर था। पैगी दिखने में वैसी लगती थी जैसी *सैवनटीन* पत्रिका में छपे चित्रों की सभी लड़कियाँ लगती थीं। उसके बाल लम्बे और सुनहले थे। वह मेरे सामने मुँह झुकाए खड़ी थी। अपने जूते से वह मिट्टी में आकार उकेर रही थी। मुझसे आँखें मिलाने की हिम्मत उसमें नहीं थी। ऐसा पहली बार हो रहा था।

"पर मेरी माँ ने कहा है कि तुम हमारे घर रुक सकती हो," उसने मुझे न देखते हुए कहा। "तुम अपने माँ-पापा से पूछ क्यों नहीं लेती कि तुम मेरे घर रात बिता सकती हो या नहीं?"

मेरी आँखें डबडबा आईं। पर मैंने कोशिश की कि मैं न तो कुछ देखूं ना सुनूं। मैं पैगी नोलन या *सेवनटीन* पत्रिका की किसी भी लड़की सी नहीं दिखती थी। पर मेरे भाई कहा करते थे कि मैं सुन्दर हूँ।

मिसेज़ नोलन बिलकुल ग़लत थीं। मेरे भाई कभी उनकी लड़की को परेशान नहीं करने वाले थे।

गुरुत्वाकर्षण की ताकत भी मेरे आँसुओं को नीचे नहीं गिरा सकी। "मैं तुम्हारे घर नहीं रह सकती," मैंने उससे कहा। मैं उसे उतना ही दुख पहुँचाना चाहती थी, जितना उसने मुझे पहुँचाया था। मैं जानती थी कि यह मेरा आख़िरी मौका था। क्योंकि अब मैं उसकी सहेली नहीं बनी रह सकती, हालांकि मेरी दूसरी सहेलियाँ नहीं थीं। उसने मेरे परिवार के बारे में जो कहा था उसके बाद तो कतई नहीं।

"क्यों नहीं?" उसने चौंक कर पूछा।

"मेरी माँ ने कहा है कि मैं तुम्हारे घर रात नहीं बिता सकती," मैंने जवाब दिया। "क्योंकि तुम्हारे भाई हैं!" इतना कह मैं पलटी और घर भाग आई।

यही वह दिन भी था जब मुझे कॉफी का अपना पहला प्याला मिला। मैं रसोई में ताज़ी सेंकी, पीसी, और तब बनाई गई कॉफी की सुगन्ध के साथ बड़ी हुई थी। मेरे पिता कहते थे कि औरतें ढ़ेर सारी काली कॉफी के दम पर ही अंतहीन और अर्थहीन बकर-झकर किया करती हैं। माँ कहती थीं कि पापा उनसे जलते हैं। मुझे इस बहस की कोई परवाह नहीं थी। मैं तो बस उस चीज़ का स्वाद चखना चाहती थी जिसकी खुशबू इस कदर मनभावन थी।

"क्या बात है प्यारी?" माँ ने मुझे मेज़ पर एक खाली जगह बैठाते हुए पूछा। जब मैंने कोई जवाब नहीं दिया तो वे आगे बोलीं। "क्या फ्रैंक ने तुम्हें फिर से छेड़ा है?" मैंने ना में सिर हिलाया। "तो क्या बॉबी छेड़ रहा था?" मौसी ने जानना चाहा। मैंने फिर ना कहा।

माँ अब फिक्रमन्द नज़र आने लगीं। ''आज स्कूल में कोई समस्या हुई है क्या?'' मैं जवाब देती उसके पहले ही उन्होंने आगे पूछा, ''पैगी कहाँ है? मैंने सोचा था कि वह रात यहाँ बिताने वाली है। क्या तुम दोनों ने झगड़ा कर लिया है?'' मैं तब भी कुछ न बोली।

पैगी और मेरे पिछले सालों में कई मतभेद हुए हैं। पर माँ जानती थी कि इन मतभेदों ने हमें एक-दूसरे के घर रात सोने जाने से कभी रोका नहीं था।

''उसने तुम्हें क्या कहा पैग्गी?'' माँ ने मेरे दुख की गहराई को भांप पूछा।

''अब वह कभी यहाँ रात नहीं बिताएगी,'' मैंने इतनी दृढ़ता से कहा कि मुझे खुद को भी अचरज हुआ।

''क्यों नहीं?'' नानी पहली बार बोलीं।

''क्योंकि मेरे नीग्रो भाई हैं,'' मैंने जवाब दिया। ''क्योंकि नोलन परिवार को उनसे डर लगता है। क्योंकि मुझे पैगी पसन्द नहीं है, और मैं कभी उसके घर नहीं रुकूँगी।

इस विषय पर आगे और कोई शब्द नहीं बोले गए। पर रसोई में पीढ़ियों की आँखों ने कड़वी सच्चाई को समझने के दुख और उदासी को ज़ाहिर कर ही दिया।

नानी उठीं और कोने की अल्मारी तक गईं। उन्होंने अल्मारी से सुनहरी किनार वाला प्याला और तश्तरी निकाली। ये केवल खास मौकों के लिए आरक्षित थे। उन्होंने प्याले में थोड़ी-सी गरम कॉफी डाली। सब उन्हें देख रहे थे। नानी तब फ्रिज तक गईं और उसमें से क्रीम निकाल उसे भी प्याले में डाला। तब प्याला और तश्तरी मेरे सामने रख दी।

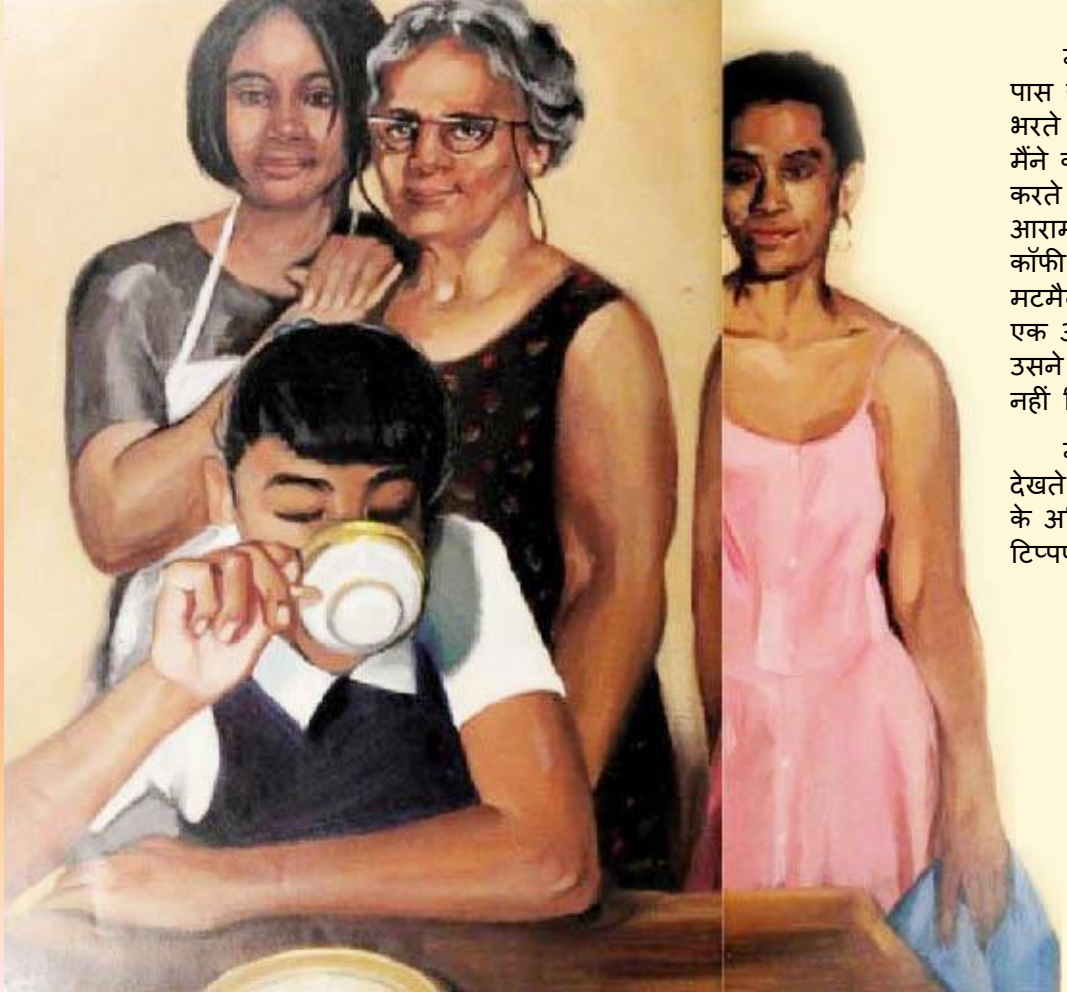

मैं नीचे झुकी। मैं प्याले के पास होना चाहती थी ताकि घूंट भरते समय उसकी खुशबू ले सकूँ। मैंने कॉफी सुड़क-सुड़क कर, आवाज़ करते हुए पी। खूब समय ले, आराम से। मैं चाहती थी कि वह कॉफी कभी खत्म ही न हो। वह मटमैले रंग की थी, और उसे मैं एक अर्से से पीना चाहती रही थी। उसने मुझे उस तरह कतई निराश नहीं किया, जैसे पैगी ने किया था।

मेरी माँ, मौसी ओर नानी मुझे देखते रहीं। उन्होंने कॉफी सुड़कने के अशिष्ट बरताव तक पर कोई टिप्पणी नहीं की।

कुछ देर बाद तीनों ने अंगड़ाई ले कमर सीधी की, गहरी साँस भरी और सिंक के पास लौट गईं ताकि सेम फलियों को शीशीयों में भरने का काम जारी रख सकें। पीछे से देखने पर उनके आकार दो नाशपातियों और एक आलू से नज़र आ रहे थे। ज़ाहिर था कि मेरे शरीर का आकार बार्बी गुड़िया के रेत-घड़ी आकार-सा होने की संभावना थी ही नहीं।

मैं उठी और माँ के पास जा खड़ी हुई। वे मुस्कुराईं और मुझे बर्तन पोंछने वाला कपड़ा और एक शीशी थमा दी। मैंने शीशी को ठीक से पोंछा, जैसे मैंने उन्हें कई-कई बार करते देखा था। और तब उसे नीचे तारों वाली टोकरी में रखा। दादी और मौसी ने ऐसा जताया मानो वे देख ही नहीं रहीं हों, पर मैंने उनके चेहरों पर मंज़ूरी की मुस्कानें देखीं।

"अरे भाई, यहाँ बहुत गर्मी है?" मौसी ने कहा और वे तीनों पंखे फिर से चालू कर दिए जो कॉफी पीते समय बन्द किए गए थे।

"और संगीत को मत भूलना, बहना," माँ ने मुझे एक और शीशी पकड़ाते कहा।

"हे ईश्वर हाँ!" नानी ने मटकते और सफेद बालों की आगे सरक आई लट को हटाते कहा। "संगीत की आवाज़ और ऊँची करो।'

लेखिका की कलम से

पेग्गी की कहानी मेरी कहानी है - 1959 में मिनियापोलिस, मिनेसोटा के एक उपनगर में मेरे पलने-बढ़ने की कहानी। 1959 में नस्लवादी पूर्वग्रहों को अलग तरह से अभिव्यक्त किया जाता था। लोग नस्ली और जातीय अन्तरों पर अपनी भावनाओं को खुल कर व्यक्त नहीं करते थे। जो लोग अमरीका के उत्तरी भाग में रहते थे वे अक्सर इस बात से इन्कार करते थे कि वहाँ भी नस्लवाद था। वे गलत थे। हालांकि उत्तर में नस्लवाद अधिक सूक्ष्म था जैसे पैग्गी की कहानी में है, पर उसका अस्तित्व निश्चित रूप से था।

दक्षिण अमरीका में जिम-क्रो कानून लागू थे। दक्षिण में रहने वाले कई गोरे यह दावा करते थे कि ये कानून गोरों और कालों को पृथक पर समान अवसर प्रदान करते थे। इन कानूनों के अनुसार गोरे और काले अलग-अलग स्कूलों में पढ़ते थे, बसों के अलग-अलग हिस्सों में बैठते थे, उन्हें दफनाया भी अलग-अलग कब्रिस्तानों में जाता था। ज़ाहिर है वे किसी भी तरह से समान नहीं थे।

कालों के लिए चलने वाले स्कूलों को कम सुविधाएं दी जाती थीं, जबकि गोरों के स्कूलों का हाल कहीं बेहतर था। कालों को अक्सर बुनियादी सुविधाएं भी मुहैया नहीं करवाई जाती थीं, जैसे सार्वजनिक तरण ताल में तैरना, सार्वजनिक नलों से पानी पीना, सार्वजनिक बस के अगले हिस्से में बैठना, सार्वजनिक भोजन काउन्टर पर खाना खाना।

ये सारी बातें 1959 में दक्षिण की सच्चाई थीं, जब पैग्गी के साथ यह घटना घटी थी।

बाद के वर्षों में कई चीज़ें बदलीं हैं। जिम-क्रो कानून अब नहीं हैं। उत्तर और दक्षिण के अधिकतर लोग अब नस्लवाद की विनाशकारी शक्ति को समझने लगे हैं। पर हमारा देश नस्लवाद से मुक्त नहीं है। नस्ली पूर्वग्रहों का असर अब भी ठीक वैसा है, जैसा 1959 में था। नस्लवाद अब भी उतना ही दुखदायी है। यह अब भी बच्चों को तेज़ी से बड़े होने पर मजबूर करता है। यह अब भी दोस्तियाँ तोड़ सकता है, जैसा पैग्गी के साथ हुआ था। दुखद यह है कि पैग्गी की कहानी अपवाद नहीं है। पर प्रेम और परिवार की मदद से वह पैगी द्वारा नकारे जाने के दर्द को भुला सकी।

इस कहानी के बाद के समय में पैग्गी के नए दोस्त बने हैं, जो विविध जातीय पृष्ठभूमियों से हैं। एक डायरी रखने और उसमें इस व अन्य घटनाओं को दर्ज करने ने मेरी और वयस्क हो रही पैग्गी की मदद की। इससे मैं अपनी भावनाओं को फिर से याद कर पाई और अपने जीवन के एक कठिन व खास समय को बेहतर समझ पाई - जो 1959 का डिब्बाबन्दी का मौसम था।

पैग्गी और उसकी सबसे अच्छी सहेली पैगी की खासी दोस्ती थी। दोनों पास-पास रहते थे। दोनों को बार्बी गुड़ियाओं से नफ़रत थी और उन्हें पेड़ पर चढ़ना पसन्द था। दोनों का नाम भी एक ही था - मार्गरेट।

पर जब पैगी कहती है कि वह अब पैग्गी के घर रात को रुकने नहीं आ सकती उनकी दोस्ती बिखरने लगती है। इस प्रक्रिया में पैग्गी यह समझती है कि दोस्त भी कैसे दग़ा दे सकते हैं। उसके दुख को उसकी नानी, मौसी और माँ का स्नेह और प्रेम मिटाता है - यह सब डिब्बबन्दी के मौसम के एक दिन घटता है।